Regsd. No. UP. HIN38167/2008

ISSN : 0975-7457

शोधमाला

SHODHMALA

(Peer Reviewed and Refereed Journal)

श्यौराज सिंह 'बेचैन' पर केंद्रित विशेषांक

वर्ष 15 अंक 26-27 जून-दिसम्बर 2022

सम्पादक

डॉ. राम अवध सिंह यादव

Scanned with CamScanner

Regsd. No. UP. HIN38167/2008

ISSN-0975-7457

शोधमाला

PEER REVIEWED AND REFEREED JOURNAL
SHODHMALA

(मानविकी एवं समाज विज्ञान की अर्द्धवार्षिक राष्ट्रीय शोध पत्रिका)

वर्ष–15, अंक 26–27, जून–दिसम्बर 2022

सम्पादक
डॉ. राम अवध सिंह यादव

अतिथि सम्पादन
राहुल कुमार यादव
गुड़िया बानो

सम्पादन सहयोग
शुभम यादव
पवन कुमार

सम्पादकीय कार्यालय
शैक्षिक एवं अनुसंधान संस्थान
मिर्जापुर, मालटारी आजमगढ़

Scanned with CamScanner

इस अंक में...

अतिथि संपादकीय 7-11

चुनिन्दा कहानियाँ

अस्थियों के अक्षर - *श्यौराज सिंह 'बेचैन'* 12-16
रावण - *श्यौराज सिंह 'बेचैन'* 17-24
घूँघट हटा था क्या? - *श्यौराज सिंह 'बेचैन'* 25-32
श्यौराज सिंह 'बेचैन' की तेरह चुनिन्दा कविताएँ 33-38

लेखक की बात

अघोषित पाबंदियों के बीच सत्ता विमर्श और दलित - *श्यौराज सिंह 'बेचैन'* 39-45
चिरन्तन प्रकाश की आस में - *श्यौराज सिंह 'बेचैन'* 46-51

आलेख

जूझता बचपन - *ओम प्रकाश वाल्मीकि* 52-53
दुखों का वारापार - *बलिपशु डॉ. धर्मवीर* 54-66
श्यौराज : कुछ किताब के बाहर - *कुछ भीतर वीरेन डंगवाल* 67
श्यौराज सिंह 'बेचैन' की कविता - *कंवल भारती* 68-74
श्यौराज सिंह 'बेचैन' : जिन खोजा तिन पाईया - *हरि राम मीणा* 75-79
मूकनायक पर मुकम्मल विमर्श - *डॉ. कालीचरण स्नेही* 80-82
वंचितों के अटूट आस्था की कहानियाँ - *देवशंकर नवीन* 83-87
वर्तमान समय का अपरिहार्य कवि - *डॉ. राजेन्द्र बड़गूजर* 88-94
बंटी, बीरू और सौराज : बचपन के त्रासद चेहरे - *डॉ. राजेश कुमार* 95-105
श्यौराज सिंह 'बेचैन' की कविता - *सुरेश कुमार* 106-108
'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' : सामाजिक उत्पीड़न की महागाथा - *डॉ. सरोज कुमारी* 109-110
क्रौंच हूँ मैं : श्यौराज सिंह 'बेचैन' - *डॉ. कर्मानंद आर्य* 111-116
मेरा बचपन मेरे कंधों पर : सत्ता विमर्श के नये कपाट - *यशवंत विरोदय* 117-118
दर्द का दरिया - *डॉ. चन्द्रभान सिंह यादव* 119-123

Scanned with CamScanner

'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' के गीतों में सामाजिक यथार्थ - डॉ. राम किशोर यादव 124-128
मुक्ति पाने के लिए योद्धा बनना पड़ता है... - डॉ. आशीष कुमार 'दीपांकर' 129-131
दलित पत्रकारिता के दस्तावेजीकरण में श्यौराज सिंह 'बेचैन'... - डॉ. वंदना 132-136
श्यौराज सिंह 'बेचैन' की रचनाओं में दलित संघर्ष - डॉ. गुड़िया चौधरी 137-139

शोधार्थियों की नजर में...

मेरा बचपन मेरे कन्धों पर में ग्रामीण भारतीय सामाजिकता - मिथिलेश कुमार 140-144
एक व्यक्ति नहीं, पूरी दलित चेतना हूँ - रश्मि नरताम 145-155
जिंदगी के मुकम्मल व्याकरण को पेश करती कविताएँ - आबिद हुसैन 156-158
पितृ संरक्षण से वंचित एक दलित बच्चे की संघर्ष गाथा - निवेदिता 159-161
'भोर के अंधेरे में' : भाव, भाषा और विचार - अक्षय सभरवाल 162-165
'भरोसे की बहन' कहानी संग्रह में दलित चेतना - रेनू 166-168
दलित स्त्री के अतीत, वर्तमान और भविष्य का मुक्तिगान - रूबी 169-171
'इस सादगी पे कौन न मर जाए ऐ खुदा' - राजा कुमार 172-173
श्यौराज सिंह 'बेचैन' की कहानियों में संविधान सापेक्ष सामाजिक... - पूर्विका अत्री 174-177
श्यौराज सिंह 'बेचैन' के लेखन में दलित प्रश्न - मनीष साव 178-182
दलित आलोचना के नए प्रतिमानों की तलाश - मनोरंजन कुमार 183-186
अपनी जड़ों से जुड़ी कहानियाँ - कीर्ति 187-191

संस्मरण

उन दिनों श्यौराज - शांति यादव 192-194
बुरा-भला श्यौराज - डॉ. रजत रानी मीनू 195-200
श्यौराज सिंह 'बेचैन' : अच्छे दिन की उम्मीद में - बजरंग बिहारी तिवारी 201-202
साहित्यकार के साथ-साथ - अनुज कुमार 203-210

साक्षात्कार

प्राइवेटाइजेशन की वजह से असंतुलन गहरा होता जा रहा है 211-217
अस्मिता विमर्श हमारी पहचान को रेखांकित करता है 218-227
चित्र विथिका

Scanned with CamScanner

'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' के गीतों में सामाजिक यथार्थ

* डॉ. राम किशोर यादव

'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' प्रो. श्यौराज सिंह 'बेचैन' जी की आत्मकथा है। इसमें जीवन के विविध रूपों का चित्रण मिलता है। यह एक ऐसे बालक की कथा है जो अपने बचपन को अपने कंधों पर लेकर चलता है। इसमें सामाजिक यथार्थ चित्रित है, शीर्षक सभी को आकर्षित करता है। आत्मकथा पढ़ने पर बेचैनी होती है। यह समाज में बच्चों पर घटित हो रही घटनाओं का पिटारा है। इस आत्मकथा में सत्य का बखान किया गया है। किसी तरह का धोखा नहीं है। गाँव के भीतर की संरचना के साथ-साथ जाति के भीतर की संरचना को भी सामने लाता है। आर्थिक विपन्नता का जीवन्त रूप देखने को मिलता है। इस आत्मकथा को विविध दृष्टिकोण से समझा जा सकता है। इसके भीतर मौजूद गीतों में सामाजिक यथार्थ चित्रित है। इसमें शिक्षा के लिए संघर्षरत एक बालक की तस्वीर है जो हार नहीं मानता है। अपने विपरीत परिस्थिति को झेलकर शिक्षा प्राप्त करने के लिए अडिग रहता है।

अपने बचपन को कंधों पर लेकर चलने वाले प्रो. 'बेचैन' हम सभी के प्रेरणास्रोत हैं। आत्मकथा लिखकर प्रो. 'बेचैन' ने भारत के करोड़ों बच्चों पर बड़ा भारी उपकार किया है, उन्हें हौसला दिया है। वे उन्हें हमेशा अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने के लिए प्रेरित करते रहते हैं। हम सभी को श्यौराज जी के प्रति कृतज्ञ होना चाहिए। डॉ. धर्मवीर ने बालक श्यौराज, 'महाशिला खंडों का संग्राम का संग्राम' में लिखा है, "मैं इसी संदर्भ में कह रहा हूँ कि दुनिया में बहुत सारे ओबामा हैं, हर देश में, हर समाज में और हर भाषा में। हमारे ओबामा श्यौराज सिंह हैं। उनसे भिन्न भी और अपनी जगह विशिष्ट भी।"

'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' आत्मकथा का अनुवाद अंग्रेजी, पंजाबी, जर्मन, मराठी, उर्दू और भोजपुरी में हो चुका है। एक बेहद गरीब परिवार में जन्म लेने वाले प्रो. श्यौराज सिंह 'बेचैन' दिल्ली विश्वविद्यालय के अध्यक्ष तक का सफर तय किया है। वे सरल, सहज, आत्मविश्वासी, गरीबों के मददगार प्रो. 'बेचैन' दलित साहित्य के शीर्षस्थ रचनाकार हैं। उनकी रचनात्मक क्षमता से सभी परिचित हैं। कविता, कहानी, आत्मकथा, पत्रकारिता सभी विधाओं में रचनाएँ की हैं। इस लेख में मैंने गीतों में निहित वेदना को उजागर करने का प्रयास किया है। श्यौराज सिंह 'बेचैन' की आत्मकथा प्रेरणा का पावर हाउस है। बालक श्यौराज के बारे में प्रो. कालीचरण स्नेही ने लिखा है-" बालक सौराज का बाल श्रमिक के रूप में जो शोषण-दमन होता रहा है, उसमें बाहरी समाज के अलावा उनका अपना परिवार भी शामिल है। सौतेले पिता, मौसी, फूफा यानी सभी रक्त संबंधी ही हैं फिर भी उनका बचपन अपने परिवार और संबंधियों की यातना की चक्की में पिसता नजर आता है। ले दे के अंधे गंगी बाबा ही एकमात्र उनके सहायक अभिभावक हैं।"[1]

'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' में अनेक गीत हैं जिनमें जीवन के संघर्षों की दास्तान है। उन गीतों में निहित वेदना है। गीतों को पढ़कर हम रूक जाते हैं; सोचने पर विवश होते हैं। हमें आगे का रास्ता अवरुद्ध दिखाई देता है। इस बालक के हौसले को सलाम है जो हर बार आने वाली बाधाओं से आगे निकलता है। हर चुनौतियों का सामना करते हुए निरन्तर प्रगति करता रहता है। लेखक के शब्दों में, "आठवीं से ही स्कूल की पढ़ाई के बाद मुझे धुर्रा-प्रेम नगर जाना पड़ता था, क्योंकि गाँव स्कूल से बीस-पच्चीस कि.मी. दूर था। पर अवकाश के दिनों में प्रेमपाल सिंह का मुफ़्त में काम करने गाँव जाना और उनकी मदद का हिसाब ब्याज सहित अग्रिम चुकता करते जाना जरूरी था।"[2]

लेखक की स्मृतियों में गाँव का हर भाग है। सभी दिशाएं और उनके साथ जुड़ा प्रसंग है। उन स्मृतियों को याद करते आत्मपरक गीत गुनगुनाते हैं "मेरे बचपन के नाजुक, वे नन्हे कदम जिस तरफ मुड़ गये रास्ता बन गया। धूप में, छाँव में, शहर में, गाँव में भूख लेकर चली और मैं चलता गया। दुख का एहसास बेचैन करता गया। मुक्ति का भाव मानस में बढ़ता गया। पूरा संसार पुस्तक सा खुलता गया- जितना पढ़ पाया मैं उतना पढ़ता गया। इतनी काली अंधेरी विरासत मिली, मेरे भीतर का दीपक था जलता गया। क्या चला मैं जो लाखों वहीं रुक गये- कौम का होके जीवन बदल-सा गया।"[3]

अपने बचपन के नाजुक कदम से चलकर लम्बी दूरी तय करता है। यह सारी विपरीत परिस्थितियों को झुकाकर अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर है। उसके भीतर का जलता हुआ दीपक निरन्तर आगे बढ़ने की सीख दे रहा था। जहाँ करोड़ों लोग उसी परिवेश और हालात में दबकर रह गये वहीं अदम्य साहस और जिजीविषा के बल पर प्रो. श्यौराज सिंह 'बेचैन' जी दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष पद तक पहुँचे। हमारे प्राणों से प्रिय गुरुवर 'बेचैन' जी निरन्तर

* श्री वेंकटेश्वर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

Scanned with CamScanner

आगे बढ़ने का संदेश देते रहते हैं। वे बताते रहते हैं कि हार नहीं मानना है, अभी तो बहुत आगे जाना है। उनके गीतों में मैं छः पंक्तियाँ जोड़ता हूँ-

पढ़कर मैं आगे ही बढ़ता गया / पढ़कर मैं दिल्ली विश्वविद्यालय आ गया।
विद्यार्थियों की सेवा में मैं लग गया। / विद्या देने की सेवा में मैं लग गया।
ऐसे गुरुवर के चरणों में मैं पड़ गया। / मेरे जीवन की दिशा ही बदल गई।

इस आत्मकथा को पढ़ते समय हम रुक जाते हैं, सोचने को विवश हो जाते हैं। हमारा समाज कितना निर्दयी है। बालक पर भी इतना अत्याचार करता है। उसे जब प्यार मिलना चाहिए था तो फटकार मिलता है। यह समाज का यथार्थ है। आत्मकथा की भूमिका में अमित सेन गुप्ता ने लिखा है- "उससे यह भी मत पूछो कि वो बोलता है, गाता है, फुसफुसाहटों में अपना नाम खुद दोहराता है, दुनिया की क्रूर मनुष्य निर्मित पाशविकता से बचकर किसी गर्मी, प्यार, करुणा का आसरे की तलाश में है। उसकी सरपरस्ती मत करो, उसे अपनी हमदर्दियाँ मत दो, मत कहो कि 'हमें अफसोस है' क्योंकि उसके आँसू और उसकी तकलीफें उसकी अपनी हैं। भर्त्सना और जीवट का निष्कासित साम्राज्य उसका अपना है। आशा-हताशा और करुणा भरी उसकी आत्मकथा यह एक महाकाव्यात्मक बचपन का एकालाप है, जिसमें बहुसंख्य आवाजें संलिप्त हैं।"[4]

'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' में समाज में व्याप्त सामाजिक, राजनैतिक और पिछड़ेपन से मुक्ति की तड़प है। भूमिका में अमित सेन गुप्ता ने लिखा है- "यह एक किस्म की मुक्ति भी है। यह मानसिक और संवेदनात्मक बेड़ियों को तोड़ता, पिछड़ेपन की अपनी स्मृतियों के साथ सामाजिक और राजनीतिक इतिहास का विखण्डन और यह मुक्ति की आध्यात्मिकता की, दलित चमड़ी के, स्पर्श तक ले जाती है और काली आँखों की काली विडम्बनाओं के नीम अंधेरे में अंतरंग गलियारों में दाखिल होती है, हाथ की लकीरों में जो उसकी नियति को नहीं गढ़ती, क्योंकि वह अपनी दुनिया की तामीर भी कर रहा है और अपने साथ दलितों की, दलित दुनिया की भी तामीर कर रहा है। एक नितान्त विषम, फूहड़ अमानवीय और विवेकहीन समाज में।"[5]

इस पुस्तक में कई प्रसंग हैं, कई मार्मिक अन्तःकथाओं के उत्पीड़न की तस्वीर है और अपने बचपन को आगे ले जाने की जिद्द है। यह बेहद मार्मिक है। इसमें भोगे हुए यथार्थ की प्रासांगिकता है। इसमें लेखक के हौसले को देखा जा सकता है। 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' में अनेक गीत हैं जिसमें दर्द ही दर्द है। बेवक्त गुजर गया माली, रामलाल: तेज धूप में, जर्जर साया, घर, बगुला भक्ति, कौम के ठेकेदार, बहन माया का ब्याह, जीवित बचा स्वराज, दो रोटी-भर जून की चोरी और पेशी प्रधान के विरासत, दिल्ली: बड़ी दुनिया में छोटे कदम, यहाँ एक मोची रहता था, भाई साब: एक प्रेरक पाठ जैसे विभिन्न उपशीर्षकों में श्यौराज जी की व्यथा चित्रित है। इन सभी को जीवन की व्यापकता में समझने की आवश्यकता है। एक बालक के ऊपर घटित हो रहे शोषण की पूरी तस्वीर सामने है। बेवक्त गुजर गया माली के प्रारम्भ में ही सिग्मंड फ्रायड का कथन है- "किसी भी इंसान के लिए बचपन में पिता के संरक्षण से बड़ी और कोई जरूरत नहीं हो सकती है।"[6] इस समय लेखक की आयु पाँच-छः वर्ष ही थी। अपने रिश्तेदारों का पूरा विवरण उन्होंने दिया है। अपनी जाति, गाँव, अपना परिवेश और उनके जैसे शोषण चक्र में पिसते बालक की सच्ची व्यथा को उजागर किया गया है। लेखक ने अपने जीवन के सभी पहलुओं पर विचार किया है। अपने परिवार और रिश्तेदारों के पेशा का भी चित्रण किया है। लेखक के शब्दों में, "दोनों फूफा लगभग तीस साल पहले मुर्दा मवेशी उठाने, चर्म शोधन करने और चर्बी बेचने का मामूली व्यवसाय किया करते थे। गंगावासी आज इक्कीसवीं सदी में भी वही काम कर रहे हैं और उसी कच्चे मकान में रह रहे हैं, जहाँ मेरे पिता ने जीवन की अन्तिम सांसें ली थीं। तब फूफा बंधुओं के परिवारों की जीविका रंगाई-फरहाई की आय पर निर्भर थी। उनकी स्थिति आज भी वैसी ही है, बदला कुछ भी नहीं है।"[7]

पिता के गुजरने के बाद इस घर में उनका पालन-पोषण करने वाला कोई नहीं था। वे बालश्रम करने के लिए मजबूर थे। अशिक्षित माँ, भूमिहीन घर, नाबलिग बच्चे तथा आय का कोई स्रोत नहीं। जीवन कैसे चलेगा। यह बेहद फटेहाली अवस्था का चित्रण है। उस समय गंगी बाबा खटोले पर लेटकर विरह गीत गाया करते थे। इसमें घर के उजड़ते हालात का चित्र मिलता है। लेखक ने अपनी सुविधा के अनुसार गीत में कुछ परिवर्तन किये हैं पर हालात ज्यों के त्यों बने हुए थे। उनके शब्दों में-

"टूटी डाल झरीं सब पत्तियाँ, / डाल भई लाचार,
विधाता ने कैसी विपदा डारी रे! / माँगत फूल हवा और पानी,
रुतु निरमोहिन ने का ठानी? / कातें कहें कौन दुख बाँटे,
कौन करे रखवारी रे! / बेवक्त गुजर गया माली... रे!...
किल्ला नये वक्त के मारे, / आँधी लू ने निबल करि डारे,

Scanned with CamScanner

का खाएँ का पिएँ बेचारे, / ऐसे कैसे जिएँ बेचारे
नंगे सिर पै बरसी ज्वाला / घर आयी कंगाली रे।
बेवक्त गुजर गया माली रे!"

इस गीत को गाते समय हृदय को थामकर रखना पड़ता है। अभावग्रस्त 'जीवन' पिता की मृत्यु और संपूर्ण जिम्मेदारी स्वयं के कंधों पर आने का दर्द है। इसे पढ़ते समय बेचैनी होती है। हम आगे ही नहीं बढ़ पाते हैं।

यह तो आत्मकथाकार का धैर्य है जो सबकुछ सहकर भी सामने लाया है। बिना गुनाह की सजा श्यौराज को मिली है। उनकी माँ ने दोनों हाथ पकड़कर झकझोर कर कहा था, "सुन सौराज, कान खोल के सुन! तेरो बाप मरि चुको है। वो तेरी सुना कूं अब कबऊ लौटिके नांय आवैगो समझे। मैं तेरी कोई जिद पूरी नांय कर पाऊँगी। अब तोई अपनी जिन्दगी अपनी कमाई में गुजारनी है। जिद्द छोड़, कुछ काम सीख ले। कछु नांय तो साइकिल में पिंचर जोड़नो ही सीख ले। इस तरह बोलते-बोलते वह रोने लगी और आँसुओं से डबडबाई आँखें लेकर घर के अन्दर चली गई। इस प्रकार मेरा बचपन मेरा बोझ लेकर मेरे कंधों पर सवार होना शुरू हो गया था। बचपन मैं छोड़ नहीं सकता था और भार लेकर दौड़ नहीं सकता था। जीवन की मंजिलें आवाज दे रही थी। रास्ते अनिश्चित और अपरिचित थे।"[8]

जीवन कैसे जीए, कोई आधार नहीं, सभी रास्ते बंद दिखाई पड़ रहे हैं। कितना पीड़ादायक है यह सोचकर ही हम सिहर उठते हैं। ऐसे हालात में कोई कैसे पढ़ पाएगा, यह विचारणीय है। भूख से बेचैन परिवार ढड़ायन तक खाने के लिए विवश है। जो विषाक्त होता है। किस प्रकार भगवान इनका जीवन बचाता है। सौतेले पिता भिकारीलाल का नकारात्मक व्यवहार जीवन को और कठिन बना दिया था। माँ विवश थी। बच्चों के लिए कुछ करना चाहती थी पर कर नहीं पा रही थी। यही वह बिन्दु है जहाँ हम सबका हृदय फट जाता है। बालक अपने बीते समय की पूरी तस्वीर पेश कर रहा है। लेखक के शब्दों में, "उन दिनों मैं भी खाना खुद बनाता था। इसलिए मजूरी करके रोटी खाता ओर रात को चौपाल पर बैठकर फुटपाथी किताबों में छपने-बिकने वाले गीतों को लय स्वर के साथ गाता। कबीर, रैदास के लोक प्रचलित भजन कंठस्थ थे।"[9]

'बगुला भगती' में भिकारी का चित्रण किया है। भिकारी हर रविवार को गंगा स्नान करने जाते थे। दूसरी ओर उनकी माँ पर जुल्म बढ़ता जा रहा था। लेखक ने लिखा है, "भिकारी हर रविवार को गंगा स्नान करते थे दूसरी ओर अम्मा पर जुल्म भी ढाया करते थे। अम्मा उनके व्यवहार और कर्मकांड में गहरा विरोधाभास देखती थी। वह कहती थी, 'भिकरिया बन्दे तू सुरग चाहतु है तो अपने करम संभारि। हर इतवार गंगा में डुबकी मारन ते तेरी बगुला भगति ते तेरे मन के पाप नांय धुल जांगे।"[10]

इस आत्मकथा को पढ़ो तो बेचैन रहो न पढ़ो तो बेचैन रहो। इसे पढ़ते वक्त आँसुओं की धारा बहने लगती है। हम आगे नहीं बढ़ पाते हैं। कुछ दिनों तक स्वयं को संभालने का प्रयास करते हैं। यह अभावग्रस्त जिन्दगी की सच्ची तस्वीर है। इस आत्मकथा में भूत-प्रेत तथा अंधविश्वास का यथार्थ चित्रण है। अंधविश्वास के कारण ही उनके पिता की असमय ही मृत्यु हो गई। झांड-फूंक करने वाला किस तरह का व्यवहार करता था उसका यथार्थ वर्णन है। भूत को भगाने के लिए सामूहिक रूप से गान होता था। उसका एक रूप दृष्टव्य है-

"आवन-आवन कह गये एक छतरी रे
तोई बीते बारह मास सूरमा जुल्मै रे।
अरे रन छतरी माँ तेरी बरजै,
बहन तेरी बरजै, बहन तेरी बरजै रे।
तू रन जुझन मत जाइ भाई रे।।
****
अरे बंगाली बाबा बारह विद्या आगे,
बारह विद्या पाछे रे
कोई बीच में करै शिकार भाई रे।"[11]

इस प्रकार इन गीतों में निहित सामाजिक यथार्थ चित्रित है। शोषण का रूप वर्णित है। बी.आर. विप्लवी ने लिखा है, "आत्मकथा 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' की सार्थकता इस बात में है कि ग्रामीण जीवन के ताने-बाने में दलित जीवन की बाध्यताओं और विवशताओं की ऐसी प्रामाणिक प्रस्तुति एक विश्वसनीय दस्तावेज बन गया है।"[12]

'बहन माया का ब्याह' में जो गीत गाये गये थे। चाची और ताइयों ने मार्मिक गीत गाये थे। बहन मायावती के विदाई का दृश्य है। उसकी अथवेता क्या थी। लेखक ने लिखा है-

"भैया को दीने महल अटरियाँ रे। / हम को दिया परदेस, अरे बाबुल मोरे!
हम तो बाबुल तेरे आंगन का कूड़ो रे। / भोर भए फिंक जाएँ बाबुल मोरे!

Scanned with CamScanner

हम तो बाबुल तेरे कोठे की चिड़िया रे। / दूर देश उड़ि जायें बाबुल मोरे।"

कितनी व्यथा है। पिता पक्ष की स्थिति तो और भी विकट थी। पिता जीवित नहीं, भैया को महल अटारी तो क्या दो वक्त की रोटी का भी इंतजाम नहीं था। कितना हृदय विदारक दृश्य है। पाठक यहां अपने आप को रोक नहीं पाते हैं। आंसू निरन्तर बहते रहते हैं। यह तो प्रो. बेचैन जी हैं जिन्होंने लिखने की हिम्मत दिखायी है। इस आत्मकथा में लेखक ने विरासत में जन्म के समय के घर परिवार का वर्णन किया है। उनके परिवार का गुजारा कैसे होता था। इन पर विचार करने पर दहशत से भर जाता है। ग्रामीण समाज में जातियों के गीत होते थे। दस-बारह साल की उम्र में उनके समय जाति गीत गुंज रहे थे-

"चप्पल पहन चमाइन चले / सेंडल पहन धोबनिया; / हाय मोरे रामा बदल गयी दुनिया।"[13]

इस प्रकार ग्रामीण समाज में सभी जातियों के गीत गाये जाते हैं। शुभ विवाह के समय गालियां दी जाती हैं। इसे लोग बुरा नहीं मानते हैं। लेखक ने अपनी स्थिति को स्वीकार किया है। उन्होंने कुछ छिपाया नहीं है। जैसा था वैसा ही सामने रख दिया है। लेखक के शब्दों में- "यद्यपि आज भी मेरे पास अपना घर, जमीन या कोई और बुनियादी साधन नहीं है, फिर भी शिक्षा, आय और साहित्य में मेरी स्थिति निरंतर बढ़ती गयी है। लेकिन आज तकनीकी तौर पर बाहर हूँ, पर मुझे इस अट्ठाईस-तीस सालों में कभी भी यह कमी महसूस नहीं हुई कि मुझे दावत देकर अपनी जाति में लौटना है। मैं स्वतः चमार हूं। व्यवहार में शिक्षित पीढ़ी में अब वैसी घृणा करने के बजाय आज मेरा पर्याप्त मान-सम्मान है। वे मुझसे अपेक्षाएँ करते हैं। पूरे गाँव में मैं अपनी सामाजिक, साहित्यिक गतिविधियों के कारण लोकप्रिय रहा हूं।"[14]

आत्मकथाकार ने लिखा है कि- "बचपन में एक मजूर के रूप में बीड़ी पीता था, बब्बा के साथ नारियल का हुक्का गुड़गुड़ाता था। परन्तु वह मेरी आदत कभी नहीं बनी। मुझे शुरू से पढ़ने और लिखने से बड़ी कोई तलब नहीं रही।"[15] अपने पूर्वजों के बारे में मंथन करते हैं इसका नतीजा रविवारीय जनसत्ता में छपी यह कविता दृष्टव्य है

"मेरी / स्मृतियों में / बार-बार आ रहे / मेरे पूर्वज
मेरे अस्तित्व पर / छा रहे मेरे अग्रज
मेरे कण्ठ से / वेदना को विद्रोह / बनाकर-गा रहे- / मेरे पूर्वज
****
मैं तुम्हारे / स्वीकार का / नकार हूँ। / तुम्हारे / अतीत का भविष्य हूँ। /
तुम्हारे / बन्द हुए रास्तों / खो गयी मंजिलों का / दिशासूचक हूँ। / सपनों में रहते / स्मृतियों में बैठे
चित्र के चरित्र का / वास्तवकि बिम्ब हूँ। / मेरे पूर्वजों! / मैंने जो कहा है / क्या उसके लिए क्षम्य हूँ?
मेरे पूर्वज!"[16]

लेखक ने अपने पूर्वज के बारे में सभी कुछ तो कह दिया है। अनकहा कुछ नहीं रहा है। यह वास्तविक जीवन की तस्वीर है। बालक सौराज क्या काम नहीं करता है। बालश्रम के साथ राजमिस्त्री का, अण्डे बेचने से लेकर नींबू बेचने तक का कार्य करता है। हर जगह उसे ठोकर ही मिलती है। कोई तो अपना नहीं समझता है। अखबार वाला, नींबू वाला नाम से सम्बोधित किया जाता है। नींबू बेचने के लिए भी सृजनात्मक तुकबंद कविता करता है। इसका एक रूप दृष्टव्य है-

"रस के भरे, रसीले नींबू, दस के दो पन्द्रह के दो।
हँस के लो भाई, हँस के लो।"[17]

अण्डे वाले के रूप में अण्डे बेचते हैं। वहाँ भी सृजनात्मकता देखते बनती है-

"ताजे अण्डे, रुपये के चार / आज नगद लो, कल उधार।
अण्डे खाएँ, हों होशियार / जो ना खाएँ, हों बीमार।"[18]

'यहाँ एक मोची रहता था' में कसेर कलां यानी डिबाई रेलवे स्टेशन का दृश्य स्मृति है। रचनाकार ने ताऊ के गाये गीत का वर्णन किया है। ऋषि पारारिख ने किस प्रकार मंछोदर की पुत्री से संबंध स्थापित किये। मंछोदर नामक मछुआरे की कन्या के इनकार करने के बाद भी ऋषि उसे मना लेते हैं उसका एक रूप दृष्टव्य है-

"चन्दा-सुरज ग्रहन डारि देउँ- / जल पै पुरूँ काई, रामा जल पै पुरूँ काई
पिता तेरे कूँ अन्धो करि देऊँ / तब जोड़ंगो गोरी तो सों असनाई / री तो सो असनाई।"[19]

इस प्रकार मछुआरे की कन्या और ऋषि के बीच मध्य नदी में दैहिक संबंध से जन्मे शिशु महाकवि व्यास बने। यहाँ मिथक का प्रयोग किया गया है। ताऊ को सुनने के लिए आसपास के लोग जमा हो जाते थे। जैसा बेचैन जी ने लिखा है। वे स्वरचित कविता भी करते थे। कबीर की तर्ज पर पद बनाकर गाते थे। उदाहरणस्वरूप-

"सन्तो बामन बाग उजाड़ा / सन्तो बामन बाग उजाड़ा
ना कछु ज्ञान-ध्यान फैलाया / ना कोई काज सँवारा।

Scanned with CamScanner

****

कम अकलन कू वेद पढ़ाए / हमरे कान फुड़ाए / रामा हमने कान फुड़ाए / सोन चिरइया पिंजर बंद भई / ग्यान दरिधर छाया- / रामा ज्ञान दरिद्दर छाया / माँ जाए दुश्मन बन बैठे- / आँगन बना अखारा / सन्तो बामन...।''[20]

इन पंक्तियों में सामाजिक वास्तविकता को उजागर किया गया है। ताऊ गा-गा करके इसे सबके सामने प्रस्तुत करते हैं। एक बार मछली के पकड़ने की प्रतीक्षा करते ताऊ गाना शुरू करते हैं-

''तेरे दया-धरम नहीं मन में / मुखड़ा का देखें दरपन में...
कागज की एक नाव बनाई / डारी गंगा जल में,
रामा डारी गंगा जल में, / धरमी-धरमी पार उतर गये
पापी डूबे जल में / रामा पापी डूबे जल में / तेरे दया-धरम नहीं मन में!!...''[21]

गाँव से वापस आ जाने के बाद चार-पाँच साल कष्ट में बीते। ताऊ की मृत्यु से किस प्रकार वे परेशान हो जाते हैं। वे सपने में आते हैं तो लेखक बड़बड़ाते हैं। उसका एक रूप दृष्टव्य है-

''होनी कबहू / टरै नांय टारे / सब होनी ने मारे। / पण्डित मरि गये मुल्ला मरि गये
वैद-हकीम बिचारे / सब होनी ने मारे। / होनी कबहू टैरे नांय टारे। / सब होनी ने मारे।
राजा मरे। / रंक हूं मरि गये / बाबू राम उचारे / सब होनी ने मारे।''[22]

लेखक जब दसवीं पास कर जाता है। सभी लोग कहते हैं, 'आखिर गंगी चमार का नाती दसवीं पास हो ही गया।' पास हो जाने के बाद आगे बढ़ने और पढ़ने के रास्ते खोजते हैं। आत्मकथाकार ने लिखा है कि- ''हाँ, यहाँ तक की आत्मकथा में मैंने केवल हाई स्कूल पास करने तक की यात्रा में आपको अपने साथ लिया है।''[23] वे शायराना शक्ल में गीत के साथ अगली मुलाकात की उम्मीद के में विदा होते हैं-

''यूँ सफर-भर याद हैं-गुजरे मुकामातों के लोग / मेरी मजबूती तो हैं, कमजोर हालातों के लोग।
दोस्त-दुश्मन-गैर अपने, पास से देखें सभी / हैं तो वे इंसा ही आखिर-सब धरम जातों के लोग।
****
है उन्हीं के हाथ में-जीवन जो दे पाते हैं लोग। / बच गयीं साँसें तो ले आया मैं इस अंजाम तक-
कल मिलूंगा मुझसे मिल लेना बहुत चाहते हैं लोग।''[24]

यहाँ आशावादी स्वर है। आपसे मिलना तो हर कोई चाहता है। करोड़ों बेसहारा बच्चे जो मिलकर अपना नया इतिहास रचना चाहते हैं। ऐसी आशा है कि आने वाली पीढ़ियों के लोग भी आपसे मिलने की तमन्ना दिलों में संजोकर रखेंगे।

संदर्भ सूची-

1. सम्यक भारत, नवम्बर 2012, पृ. 60
2. बेचैन, श्यौराज सिंह, 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' प्रथम संस्करण, 2009, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 315
3. वही, पृ. 315
4. बेचैन, श्यौराज सिंह, 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' भूमिका (अमित सेन गुप्ता), प्रथम संस्करण, 2009, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 1
5. वही, पृ. 1
6. बेचैन, श्यौराज सिंह, 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' प्रथम संस्करण, 2009, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 11
7. वही, पृ. 11
8. वही, पृ. 41
9. वही, पृ. 47
10. वही, पृ. 49
11. वही, पृ. 77-78
12. सम्यक भारत, नवम्बर 2012, पृ. 196
13. बेचैन, श्यौराज सिंह, 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' प्रथम संस्करण, 2009, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 179
14. वही, पृ. 193
15. वही, पृ. 194
16. वही, पृ. 194-197
17. वही, पृ. 215
18. वही, पृ. 223
19. वही, पृ. 248-249
20. वही, पृ. 249-250
21. वही, पृ. 260
22. वही, पृ. 288-289
23. वही, पृ. 410
24. वही, पृ. 411

Scanned with CamScanner